



दोहे जो मन मोहे

कबीर · रहीम · तुलसीदास और अन्य कवियों के दोहे

आयुष



दोहे जो मन मोहे

कबीर · रहीम · तुलसीदास और अन्य कवियों के दोहे

आयुष

भूमिका

बचपन से ही मैंने अपने पिताजी को दोहे सुनाते सुना है। उनके मुँह से सुने वे दोहे आज भी मेरे मन में बसे हैं।

बड़ा हुआ तो चाहा कि ये दोहे मुझे भी याद हों। पर जब महान कवियों के दोहे पढ़ने निकला, तो एक ही जगह सब कुछ नहीं मिला।

तब मैंने तय किया कि अपने लिए एक संग्रह खुद बनाऊँगा: कवि के अनुसार सजा हुआ, सरल और पढ़ने में आसान, ताकि मैं इन्हें एक-एक करके सीख सकूँ। वही संग्रह अब मैं सजाकर, व्यवस्थित करके आपके सामने रख रहा हूँ।

अगर इसके किसी पन्ने पर आपको अपने किसी बड़े की सुनाई हुई कोई पंक्ति याद आ जाए, तो मेरी मेहनत सफल है। पढ़िए, गुनगुनाइए, और किसी अपने को सुनाइए।

— आयुष

तीन काव्य-रूप: दोहा, चौपाई और पद

दोहा दो पंक्तियों की छोटी कविता। हर पंक्ति में 24 मात्राएँ होती हैं — पहले हिस्से में 13 और दूसरे में 11 — यानी पूरे दोहे में 48। दोनों पंक्तियों के अंत में तुक मिलती है। (मात्रा = बोलने में लगा समय: छोटे अक्षर की 1, बड़े की 2।)

दुख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय ।
जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय ॥ — कबीर

चौपाई चार चरणों की कविता; हर चरण में 16 मात्राएँ।
रामचरितमानस मुख्यतः चौपाइयों में लिखी गई है, जिनके बीच-बीच में दोहे-सोरठे आते हैं।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई ।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई ॥
निर्नय सकल पुरान बेद कर ।
कहेउँ तात जानहिं कोबिद नर ॥ — तुलसीदास

पद राग में गाई जाने वाली रचना। इसकी एक टेक (स्थायी: बार-बार दोहराई जाने वाली पंक्ति) होती है। सूरदास, मीराबाई और कबीर के पद बहुत प्रसिद्ध हैं।

झीनी झीनी बीनी चदरिया । (टेक)
काहे कै ताना काहे कै भरनी, कौन तार से बीनी चदरिया ॥ —

कबीर

ये तीनों रूप नीति, भक्ति और जीवन की सीख को सरल ढंग से कहते हैं।

विषय-सूची (कवि के अनुसार)

कवि	दोहे	पृष्ठ
कबीर	८४	७-३५
रहीम	६९	३६-५९
तुलसीदास	४८	६०-७६
बिहारी	४५	७७-९२
वृन्द	४२	९३-१०७
रविदास	३	१०८-१०९
रसखान	६	११०-११२

कबीर



चित्र: ब्रिटिश म्यूजियम, लंदन (सार्वजनिक डोमेन) • विकिमीडिया कॉमन्स

कबीर काशी (वाराणसी) के संत-कवि थे। वे लगभग पंद्रहवीं सदी में हुए; निधन लगभग 1518 के आसपास माना जाता है।

उनकी वाणी साखी, सबद और रमैनी के रूप में "बीजक" में मिलती है; दोहे (साखी) सबसे ज़्यादा जाने जाते हैं। वे निर्गुण भक्ति धारा के कवि थे, भाषा मिली-जुली "सधुक्कड़ी" है।

कबीर

दोहा

दुख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय ।
जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय ॥

माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर ।
कर का मनका डार दे, मन का मनका फेर ॥

साईं इतना दीजिये, जा में कुटुम समाय ।
मैं भी भूखा न रहूँ, साधु ना भूखा जाय ॥

कबीर

दोहा

धीरे धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय ।
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आए फल होय ॥

माया मरी न मन मरा, मर मर गए शरीर ।
आशा तृष्णा न मरी, कह गए दास कबीर ॥

माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोय ।
एक दिन ऐसा आएगा, मैं रौंदूँगी तोय ॥

कबीर

दोहा

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब ।
पल में प्रलय होगी, बहुरि करेगा कब ॥

ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय ।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय ॥

साधु ऐसा चाहिए जैसा सूप सुभाय ।
सार सार को गहि रहै थोथा देई उड़ाय ॥

कबीर

दोहा

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय ।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय ॥

कबीर गर्ब न कीजिये, ऊँचा देखि अवास ।
काल परौं भुंइ लेटना, ऊपर जमसी घास ॥

जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठि ।
मैं बपुरा बूडन डरा, रहा किनारे बैठि ॥

कबीर

दोहा

निन्दक नियरे राखिये आँगन कुटी छवाय ।
बिन पानी साबुन बिना निर्मल करै सुभाय ॥

बड़ा हुआ तो क्या हुआ जैसे पेड़ खजूर ।
पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर ॥

कस्तूरी कुंडल बसै, मृग ढूँढ़ै बन माहिं ।
ऐसे घट-घट राम हैं, दुनिया देखै नाहिं ॥

कबीर

दोहा

जो तोको काँटा बुवै, ताहि बोव तू फूल ।
तोहि फूल को फूल है, वाको है तिरसूल ॥

साँच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप ।
जाके हिरदै साँच है ताके हिरदै आप ॥

कबीर सो धन संचिये, जो आगे कूँ होइ ।
सीस चढ़ाए पोटली, ले जात न देख्या कोइ ॥

कबीर

दोहा

प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय ।
राजा परजा जेहि रुचें, शीश देई ले जाय ॥

माँगन मरण समान है, मति माँगो कोई भीख ।
माँगन से तो मरना भला, यह सतगुरु की सीख ॥

ज्यों तिल माँही तेल है, ज्यों चकमक में आग ।
तेरा साईं तुझ में है, तू जाग सके तो जाग ॥

कबीर

दोहा

कबिरा सोई पीर है, जो जाने पर पीर ।
जो पर पीर न जानई, सो काफिर बेपीर ॥

बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय ।
जो दिल खोजा आपना, मुझसा बुरा न कोय ॥

कबिरा खड़ा बजार में, सबकी माँगे खैर ।
ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर ॥

कबीर

दोहा

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं ।
सब अँधियारा मिट गया, दीपक देख्या माँहि ॥

कबिरा मन निर्मल भया जैसे गंगा नीर ।
पीछे पीछे हरि फिरै कहत कबीर कबीर ॥

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत ।
कहै कबीर हरि पाइए, मन ही की परतीत ॥

कबीर

दोहा

तन को जोगी सब करे, मन को बिरला कोय ।
सहजै सब विधि पाइये, जो मन जोगी होय ॥

जहाँ दया तहाँ धर्म है, जहाँ लोभ तहाँ पाप ।
जहाँ क्रोध तहाँ काल है, जहाँ क्षमा तहाँ आप ॥

जब लगि भगति सकाम है, तब लगि निष्फल सेव ।
कह कबीर वह क्यों मिले, निहकामी निज देव ॥

कबीर

दोहा

कबीर संगत साधु की, हरै और की व्याधि ।
संगत बुरी असाधु की, आठों पहर उपाधि ॥

मन के मते न चलिये, मन के मते अनेक ।
जो मन पर असवार है, सो साधु कोई एक ॥

जब लग नाता जगत का, तब लग भक्ति न होय ।
नाता तोड़े हरि भजे, भगत कहावें सोय ॥

कबीर

दोहा

कबिरा खड़ा बजार में, लिये लुकाठी हाथ ।
जो घर फूँके आपना, चले हमारे साथ ॥

तिनका कबहुँ न निंदिये, जो पाँयन तर होय ।
कबहुँ उड़ आँखिन परे, पीर घनेरी होय ॥

गुरु गोविंद दोनों खड़े, काके लागूँ पाँय ।
बलिहारी गुरु आपनो, गोविंद दियो बताय ॥

कबीर

दोहा

सुख में सुमिरन ना किया, दुःख में किया याद ।
कह कबीर ता दास की, कौन सुने फरियाद ॥

लूट सके तो लूट ले, राम नाम की लूट ।
पाछे फिरे पछताओगे, प्राण जाहिं जब छूट ॥

जाति न पूछो साधु की, पूछि लीजिए ज्ञान ।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ॥

कबीर

दोहा

कबीरा ते नर अंध हैं, गुरु को कहते और ।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठै नहीं ठौर ॥

पाँच पहर धन्धे गया, तीन पहर गया सोय ।
एक पहर हरि नाम बिन, मुक्ति कैसे होय ॥

कबीरा सोया क्या करे, उठि न भजे भगवान ।
जम जब घर ले जायेंगे, पड़ी रहेगी म्यान ॥

कबीर

दोहा

रात गँवाई सोय के, दिवस गँवाया खाय ।
हीरा जन्म अमोल था, कौड़ी बदले जाय ॥

जग में बैरी कोई नहीं, जो मन शीतल होय ।
यह आपा तो डाल दे, दया करे सब कोय ॥

कामी, क्रोधी, लालची, इनसे भक्ति न होय ।
भक्ति करे कोइ सूरमा, जाति वरन कुल खोय ॥

कबीर

दोहा

लागी लगन छूटे नाहिं, जीभ चोंच जरि जाय ।
मीठा कहा अंगार में, जाहि चकोर चबाय ॥

जहाँ काम तहाँ नाम नहिं, जहाँ नाम नहिं काम ।
दोनों कबहुँ ना मिलै, रवि रजनी इक ठाम ॥

जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जान मसान ।
जैसे खाल लुहार की, साँस लेत बिना प्रान ॥

कबीर

दोहा

माली आवत देख के, कलियान करी पुकार ।
फूल फूल चुन लिए, काल हमारी बार ॥

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान ।
सीस दिये जो गुरु मिलै, तो भी सस्ता जान ॥

गुरु पारस को अन्तरो, जानत है सब सन्त ।
वह लोहा कंचन करे, ये करि लेय महन्त ॥

कबीर

दोहा

गुरु समान दाता नहीं, याचक सीष समान ।
तीन लोक की सम्पदा, सो गुरु दीन्ही दान ॥

गुरु कुम्हार सिष कुंभ है, गढ़ि गढ़ि काढ़ै खोट ।
अन्तर हाथ सहार दै, बाहर बाहै चोट ॥

गुरु बिन ज्ञान न उपजै, गुरु बिन मिलै न मोष ।
गुरु बिन लखै न सत्य को, गुरु बिन मिटे न दोष ॥

कबीर

दोहा

कबीर लहरि समुन्द्र की, मोती बिखरे आय ।
बगुला परख न जानई, हंस चुनि चुनि खाय ॥

साधु कहावन कठिन है, ज्यों खाँड़े की धार ।
डगमगाय तो गिर पड़े निहचल उतरे पार ॥

साधु कहावत कठिन है, लम्बा पेड़ खजूर ।
चढ़े तो चाखै प्रेम रस, गिरै तो चकनाचूर ॥

कबीर

दोहा

आशा तजि माया तजै, मोह तजै अरु मान ।
हरष शोक निन्दा तजै, कहैं कबीर सन्त जान ॥

दास कहावन कठिन है, मैं दासन का दास ।
अब तो ऐसा होय रहूँ पाँव तले की घास ॥

कबीर मन्दिर लाख का, जड़िया हीरा लाल ।
दिवस चारि का पेखना, विनशि जायगा काल ॥

कबीर

दोहा

कबीर रसरी पाँव में, कहँ सोवै सुख चैन ।
साँस नगारा कूच का, बाजत है दिन रैन ॥

तन सराय मन पाहरू, मनसा उतरी आय ।
कोई काहू का है नहीं, देखा ठोंकि बजाय ॥

चेत सवेरे बावरे, फिर पाछे पछिताय ।
तोको जाना दूर है, कहँ कबीर बुझाय ॥

कबीर

दोहा

चलती चक्की देख के, दिया कबीरा रोय ।
दुइ पट भीतर आइके, साबित बचा न कोय ॥

आय हैं सो जाएँगे, राजा रंक फकीर ।
एक सिंहासन चढ़ि चले, एक बँधे जात जंजीर ॥

सात समंदर मसि करूँ लेखनि सब बनराइ ।
धरती सब कागद करौं हरि गुण लिखा न जाइ ॥

कबीर

दोहा

पाहन पूजे हरि मिलें, तो मैं पूजौं पहार ।
याते ये चक्की भली, पीस खाय संसार ॥

सोना, सज्जन, साधु जन, टूट जुड़ै सौ बार ।
दुर्जन कुम्भ कुम्हार के, एकै धका दरार ॥

साधु गाँठि न बाँधई, उदर समाता लेय ।
आगे पीछे हरि खड़े, जब माँगे तब देय ॥

कबीर

दोहा

मानसरोवर सुभर जल, हंसा केलि कराहिं ।
मुकताहल मुकता चुगै, अब उड़ि अनत ना जाहिं ॥

कबिरा संगत साधु की, ज्यों गंधी की बास ।
जो कुछ गंधी दे नहीं, तो भी बास सुबास ॥

संसारी से प्रीतड़ी, सरै न एको काम ।
दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम ॥

कबीर

दोहा

आज कहै मैं कल भजूँ, काल कहै फिर काल ।
आज काल के करत ही, औसर जासी चाल ॥

यह तन काँचा कुंभ है, लिया फिरै था साथ ।
ढबका लागा फुटि गया, कछु न आया हाथ ॥

बिन रखवाले बाहिरा, चिड़िया खाया खेत ।
आधा परधा ऊबरै, चेति सकै तो चेति ॥

कबीर

दोहा

स्वारथ का सब कोई सगा, सारा ही जग जान ।
बिन स्वारथ आदर करे, सो नर चतुर सुजान ॥

मनुवा तो पंछी भया, उड़ि के चला अकास ।
ऊपर ही ते गिरि पड़ा, मन माया के पास ॥

कबीर यह संसार है, जैसा सेमल फूल ।
दिन दस के व्यवहार में, झूठे रंग न भूल ॥

कबीर

दोहा

कबीर गर्ब न कीजिये, काल गहे कर केस ।
ना जानो कित मारि हैं, क्या घर क्या परदेस ॥

पकी हुई खेती देखि के, गरब किया किसान ।
अजहुँ झोला बहुत है, घर आवै तब जान ॥

बिरछा कबहुँ न फल भखै, नदी न अंचय नीर ।
परमारथ के कारने, साधु धरा शरीर ॥

कबीर

दोहा

साधु बड़े परमारथी, घन ज्यों बरसै आय ।
तपन बुझावै और की, अपनो पारस लाय ॥

लघुता ते प्रभुता मिले, प्रभुता ते प्रभु दूरि ।
चींटी लै सक्कर चली, हाथी के सिर धूरि ॥

हस्ती चढ़िये ज्ञान की, सहज दुलीचा डार ।
श्वान रूप संसार है, भूकन दे झक मार ॥

रहीम



चित्र: हाशिम, लगभग १६२७ · स्मिथसोनियन संस्थान (सार्वजनिक डोमेन)

रहीम का पूरा नाम अब्दुरहीम खानखाना था। वे बैरम खाँ के पुत्र थे और अकबर के दरबार के प्रसिद्ध मंत्रियों में गिने जाते हैं। उनका जीवन-काल सन् 1556 से 1627 तक माना जाता है।

वे कई भाषाओं के जानकार थे। उनके सरल दोहे नीति, प्रेम और भक्ति की बातें कहते हैं; "रहीम दोहावली" उनकी जानी-मानी रचना है।

रहीम

दोहा

एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय ।
रहिमन मूलहिं सींचिबो, फूलै फलै अघाय ॥

कदली, सीप, भुजंग मुख, स्वाति एक गुन तीन ।
जैसी संगति बैठिए, तैसोई फल दीन ॥

कहि रहीम संपति सगे, बनत बहुत बहु रीत ।
बिपति कसौटी जे कसे, ते ही साँचे मीत ॥

रहीम

दोहा

कहु रहीम केतिक रही, केतिक गई बिहाय ।
माया ममता मोह परि, अंत चले पछिताय ॥

छिमा बड़न को चाहिए, छोटेन को उतपात ।
का रहिमन हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात ॥

जलहिं मिलाय रहीम ज्यों, कियो आपु सम छीर ।
अँगवहि आपुहि आप त्यों, सकल आँच की भीर ॥

रहीम

दोहा

जाल परे जल जात बहि, तजि मीनन को मोह ।
रहिमन मछरी नीर को, तऊ न छाँड़त छोह ॥

जे गरीब पर हित करें, ते रहीम बड़ लोग ।
कहाँ सुदामा बापुरो, कृष्ण मिताई जोग ॥

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग ।
चंदन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग ॥

रहीम

दोहा

तरुवर फल नहिं खात हैं, सरबर पियहिं न पान ।
कहि रहीम पर काज हित, संपति सँचहि सुजान ॥

दीन सबन को लखत है, दीनहिं लखै न कोय ।
जो रहीम दीनहिं लखै, दीनबंधु सम होय ॥

दोनों रहिमन एक से, जौ लौं बोलत नाहिं ।
जान परत हैं काक पिक, ऋतु बसंत के माँहिं ॥

रहीम

दोहा

धनि रहीम जल पंक को, लघु जिय पियत अघाय ।
उदधि बड़ाई कौन है, जगत पियासो जाय ॥

निज कर क्रिया रहीम कहि, सुधि भावी के हाथ ।
पाँसे अपने हाथ में, दाँव न अपने हाथ ॥

बिगरी बात बनै नहीं, लाख करौ किन कोय ।
रहिमन फाटे दूध को, मथे न माखन होय ॥

रहीम

दोहा

भजौं तो काको मैं भजौं, तजौं तो काको आन ।
भजन तजन ते बिलग हैं, तेहि रहीम तू जान ॥

मथत मथत माखन रहै, दही मही बिलगाय ।
रहिमन सोई मीत है, भीर परे ठहराय ॥

यह रहीम निज संग लै, जनमत जगत न कोय ।
बैर, प्रीति, अभ्यास, जस, होत होत ही होय ॥

रहीम

दोहा

यों रहीम सुख दुख सहत, बड़े लोग सह साँति ।
उवत चंद जेहि भाँति सो, अथवत ताही भाँति ॥

रहिमन कठिन चितान ते, चिन्ता को चित चेत ।
चिता दहति निर्जीव को, चिन्ता जीव समेत ॥

रहिमन तब लगि ठहरिए, दान मान सनमान ।
घटत मान देखिय जबहिं, तुरतहि करिय पयान ॥

रहीम

दोहा

रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिए डारि ।
जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तरवारि ॥

रहिमन पानी राखिये, बिनु पानी सब सून ।
पानी गए न ऊबरै, मोती, मानुष, चून ॥

रहिमन प्रीति न कीजिए, जस खीरा ने कीन ।
ऊपर से तो दिल मिला, भीतर फाँकें तीन ॥

रहीम

दोहा

रहिमन प्रीति सराहिए, मिले होत रँग दून ।
ज्यों जरदी हरदी तजै, तजै सफेदी चून ॥

रहिमन बहु भेषज करत, ब्याधि न छाँड़त साथ ।
खग मृग बसत अरोग बन, हरि अनाथ के नाथ ॥

रहिमन बिगरी आदि की, बनै न खरचे दाम ।
हरि बाढ़े आकाश लौं, तऊ बावनै नाम ॥

रहीम

दोहा

रहिमन याचकता गहे, बड़े छोट है जात ।
नारायन हू को भयो, बावन आँगुर गात ॥

रहिमन सुधि सबतें भली, लगै जो बारंबार ।
बिछुरे मानुष फिरि मिलें, यहै जान अवतार ॥

रीति प्रीति सब सों भली, बैर न हित मित गोत ।
रहिमन याही जनम की, बहुरि न संगति होत ॥

रहीम

दोहा

वे रहीम नर धन्य हैं, पर उपकारी अंग ।
बाँटनेवारे को लगे, ज्यों मेंहदी को रंग ॥

समय लाभ सम लाभ नहीं, समय चूक सम चूक ।
चतुरन चित रहिमन लगी, समय चूक की हूक ॥

सौदा करो सो करि चलौ, रहिमन याही बाट ।
फिर सौदा पैहो नहीं, दूरी जान है बाट ॥

रहीम

दोहा

संपति भरम गँवाइ कै, हाथ रहत कछु नाहिं ।
ज्यों रहीम ससि रहत है, दिवस अकासहिं माहिं ॥

रहिमन कबहुँ बड़ेन के, नाहिं गर्व को लेस ।
भार धरैं संसार को, तऊ कहावत सेस ॥

कहि रहीम धन बढ़ि घटे, जात धनिन की बात ।
घटै बढ़ै उनको कहा, घास बेंचि जे खात ॥

रहीम

दोहा

काज परै कछु और है, काज सरै कछु और ।
रहिमन भँवरी के भए नदी सिरावत मौर ॥

जो रहीम दीपक दसा, तिय राखत पट ओट ।
समय परे ते होत है, वाही पट की चोट ॥

देनहार कोउ और है, भेजत सो दिन रैन ।
लोग भरम हम पै धरें, याते नीचे नैन ॥

रहीम

दोहा

रहिमन तीन प्रकार ते, हित अनहित पहिचानि ।
पर बस परे, परोस बस, परे मामिला जानि ॥

बहै प्रीति नहिं रीति वह, नहीं पाछिलो हेत ।
घटत घटत रहिमन घटै, ज्यों कर लीन्हें रेत ॥

अनुचित उचित रहीम लघु, करहिं बड़ेन के जोर ।
ज्यों ससि के संजोग तें, पचवत आगि चकोर ॥

रहीम

दोहा

कमला थिर न रहीम कहि, यह जानत सब कोय ।
पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चंचला होय ॥

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो छिटकाय ।
टूटे से फिर ना मिले, मिले गाँठ परि जाय ॥

रहिमन बिपदाहू भली, जो थोरे दिन होय ।
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय ॥

रहीम

दोहा

रहिमन निज संपति बिना, कोउ न बिपति सहाय ।
बिनु पानी ज्यों जलज को, नहिं रवि सकै बचाय ॥

बड़े बड़ाई ना करें, बड़े न बोलैं बोल ।
रहिमन हीरा कब कहै, लाख टका मेरो मोल ॥

रहिमन जिह्वा बावरी, कहि गइ सरग पताल ।
आपु तो कहि भीतर रही, जूती खात कपाल ॥

रहीम

दोहा

खीरा सिर तें काटिए, मलियत नमक बनाय ।
रहिमन करुए मुखन को, चहिअत इहै सजाय ॥

रहिमन वे नर मर चुके, जे कहूँ माँगन जाहिं ।
उनते पहिले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहिं ॥

रहिमन चुप ह्वै बैठिये, देखि दिनन को फेर ।
जब नीके दिन आइहैं बनत न लगिहैं देर ॥

रहीम

दोहा

टूटे सुजन मनाइए, जौ टूटे सौ बार ।
रहिमन फिरि फिरि पोहिए, टूटे मुक्ताहार ॥

रहिमन अँसुआ नैन ढरि, जिय दुख प्रगट करेइ ।
जाहि निकारो गेह ते, कस न भेद कहि देइ ॥

आब गई आदर गया, नैनन गया सनेहि ।
ये तीनों तब ही गये, जबहि कहा कछु देहि ॥

रहीम

दोहा

रहिमन ओछे नरन सों, बैर भलो ना प्रीति ।
काटे चाटै स्वान के, दोऊ भाँति विपरीति ॥

रहिमन अब वे बिरछ कहँ, जिनकी छाँह गंभीर ।
बागन बिच बिच देखिअत, सेंहुड़, कुंज, करीर ॥

जो बड़ेन को लघु कहें, नहिं रहीम घटि जाँहि ।
गिरधर मुरलीधर कहे, कछु दुख मानत नाहिं ॥

रहीम

दोहा

रहिमन या तन सूप है, लीजै जगत पछोर ।
हलुकन को उड़ि जान दै, गरुए राखि बटोर ॥

रहिमन मनहिं लगाइ के, देखि लेहु किन कोय ।
नर को बस करिबो कहा, नारायण बस होय ॥

रहिमन निज मन की बिथा, मन ही राखो गोय ।
सुनि अठिलैहैं लोग सब, बाँटि न लैहैं कोय ॥

रहीम

दोहा

आप न काहू काम के, डार पात फल फूल ।
औरन को रोकत फिरैं, रहिमान पेड़ बबूल ॥

समय पाय फल होत है, समय पाय झरि जाय ।
सदा रहे नहिं एक सी, का रहीम पछिताय ॥

सब को सब कोऊ करै, कै सलाम कै राम ।
हित रहीम तब जानिए, जब कछु अटकै काम ॥

रहीम

दोहा

रहिमन पर उपकार के, करत न यारी बीच ।
मांस दियो शिवि भूप ने, दीन्हों हाड़ दधीच ॥

जब लगि बित्त न आपुने, तब लगि मित्र न कोय ।
रहिमन अंबुज अंबु बिनु, रवि नाहिंन हित होय ॥

रहिमन बात अगम्य की, कहन सुनन को नाहिं ।
जे जानत ते कहत नाहिं, कहत ते जानत नाहिं ॥

रहीम

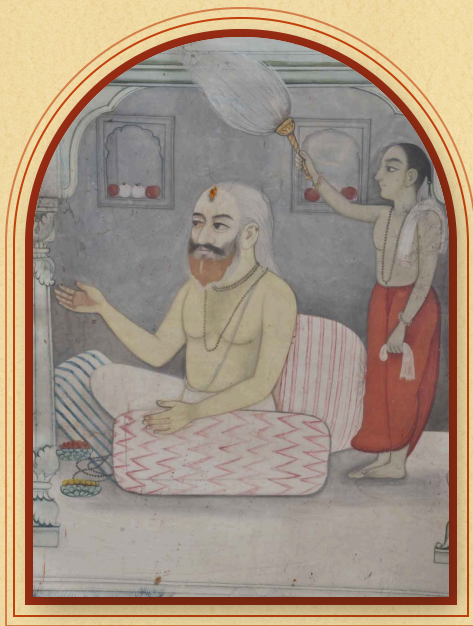
दोहा

रहिमन रीति सराहिए, जो घट गुन सम होय ।
भीति आप पै डारि कै, सबै पियावै तोय ॥

रहिमन उजली प्रकृत को, नहीं नीच को संग ।
करिया बासन कर गहे, कालिख लागत अंग ॥

होय न जाकी छाँह ढिग, फल रहीम अति दूर ।
बढ़िहू सो बिनु काज ही, जैसे तार खजूर ॥

तुलसीदास



चित्र: १७वीं सदी का चित्र, तुलसी घाट, वाराणसी (सार्वजनिक डोमेन)

तुलसीदास राम के भक्त कवि थे। उनका निधन सन् 1623 में काशी में हुआ; जन्म-वर्ष के बारे में विद्वानों में मतभेद है (सोलहवीं सदी का आरंभ/मध्य)।

"रामचरितमानस" (अवधी) उनकी सबसे प्रसिद्ध रचना है। इसके अलावा दोहावली, कवितावली, विनय-पत्रिका और गीतावली भी उनकी हैं। जन्म-स्थान राजापुर (उ.प्र.) माना जाता है, कुछ लोग सोरों भी कहते हैं।

तुलसीदास

दोहा

नामु राम को कलपतरु कलि कल्याण निवासु ।
जो सुमिरत भयो भाँग तें तुलसी तुलसीदासु ॥

तुलसी हरि अपमान तें होइ अकाज समाज ।
राज करत रज मिलि गए सदल सकुल कुरुराज ॥

तुलसी उद्यम करम जुग जब जेहि राम सुडीठि ।
होइ सुफल सोइ ताहि सब सनमुख प्रभु तन पीठि ॥

तुलसीदास

दोहा

तुलसी ममता राम सों समता सब संसार ।
राग न रोष न दोष दुख दास भए भव पार ॥

घर घर माँगे टूक पुनि भूपति पूजे पाय ।
जे तुलसी तब राम बिनु ते अब राम सहाय ॥

सेवा सील सनेह बस करि परिहरि प्रिय लोग ।
तुलसी ते सब राम सों सुखद सँजोग बियोग ॥

तुलसीदास

दोहा

सूधे मन सूधे बचन सूधी सब करतूति ।
तुलसी सूधी सकल बिधि रघुबर प्रेम प्रसूति ॥

मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर ।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर ॥

खेती बानि बिद्या बनिज सेवा सिलिप सुकाज ।
तुलसी सुरतरु सरिस सब सुफल राम के राज ॥

तुलसीदास

दोहा

कहिबे कहँ रसना रची सुनिबे कहँ किये कान ।
धरिबे कहँ चित हित सहित परमारथहि सुजान ॥

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ ॥

उत्तम मध्यम नीच गति पाहन सिकता पानि ।
प्रीति परिच्छा तिहुन की बैर बितिक्रम जानि ॥

तुलसीदास

दोहा

राम कृपाँ तुलसी सुलभ गंग सुसंग समान ।
जो जल परै जो जन मिलै कीजै आपु समान ॥

प्रभु समीप गत सुजन जन होत सुखद सुबिचार ।
लवन जलधि जीवन जलद बरषत सुधा सुबारि ॥

नीच निरावहिं निरस तरु तुलसी सींचहिं ऊख ।
पोषत पयद समान सब बिष पियूष के रूख ॥

तुलसीदास

दोहा

तुलसी जे कीरति चहहिं पर की कीरति खोइ ।
तिनके मुँह मसि लागिहैं मिटहि न मरिहै धोइ ॥

तुलसी असमय के सखा धीरज धरम बिबेक ।
साहित साहस सत्यव्रत राम भरोसो एक ॥

पात पात को सींचिबो न करू सरग तरु हेत ।
कुटिल कटुक फर फरैगो तुलसी करत अचेत ॥

तुलसीदास

दोहा

सहि कुबोल साँसति सकल अँगड़ अनट अपमान ।
तुलसी धरम न परिहरिअ कहि करि गए सुजान ॥

तूठहिं निज रुचि काज करि रूठहिं काज बिगारि ।
तीय तनय सेवक सखा मन के कंटक चारि ॥

कूप खनत मंदिर जरत आएँ धारि बबूर ।
बवहिं नवहिं निज काज सिर कुमति सिरोमनि कूर ॥

तुलसीदास

दोहा

सेवक कर पद नयन से मुख सो साहिबु होइ ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि सुकबि सराहहिं सोइ ॥

तुलसी भल बरतरु बढत निज मूलहिं अनुकूल ।
सबहि भाँति सब कहँ सुखद दलनि फलनि बिनु फूल ॥

आपन छोड़ो साथ जब ता दिन हितू न कोइ ।
तुलसी अंबुज अंबु बिनु तरनि तासु रिपु होइ ॥

तुलसीदास

दोहा

सरनागत कहूँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पावँर पापमय, तिन्हहि बिलोकत हानि ॥

तुलसी पावस के समय धरी कोकिलन मौन ।
अब तो दादुर बोलिहैं हमें पुछिहै कौन ॥

सुख मुद मंगल कुमुद बिधु सुगुन सरोरूह भानु ।
करहु काज सब सिद्धि सुभ आनि हिउँ हनुमानु ॥

तुलसीदास

दोहा

रीझि खीझि गुरु देत सिख सखा सुसाहिब साधु ।
तोरी खाइ फल होइ भलु तरु काटें अपराधु ॥

सकल कामना हीन जे राम भगति रस लीन ।
नाम सुप्रेम पियूष हृद तिन्हहुँ किए मन मीन ॥

काल करम गुन दोष जग जीव तिहारे हाथ ।
तुलसी रघुबर राबरो जानु जानकीनाथ ॥

तुलसीदास

दोहा

तुलसी राम सुदीठि तें निबल होत बलवान ।
बैर बालि सुग्रीव के कहा कियो हनुमान ॥

सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस ।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास ॥

राम नाम मनि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जौ चाहसि उजियार ॥

तुलसीदास

दोहा

रामहिं सुमिरत रन भिरत देत परत गुरु पायँ ।
तुलसी जिन्हहि न पुलक तनु ते जग जीवत जायँ ॥

सत्य बचन मानस बिमल कपट रहित करतूति ।
तुलसी रघुबर सेवकहि सकै न कलिजुग धूति ॥

ज्ञानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार ।
केहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न एहिं संसार ॥

तुलसीदास

दोहा

मिथ्या माहुर सज्जनहि खलहि गरल सम साँच ।
तुलसी छुवत पराइ ज्यों पारद पावक आँच ॥

प्रीति राम सों नीति पथ चलिय राग रिस जीति ।
तुलसी संतन के मते इहै भगति की रीति ॥

एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास ।
एक राम घन स्याम हित चातक तुलसीदास ॥

तुलसीदास

दोहा

जो परि पायँ मनाइए तासों रूठि बिचारि ।
तुलसी तहाँ न जीतिऐ जहँ जीतेहूँ हारि ॥

तनु गुन धन महिमा धरम तेहि बिनु जेहि अभिमान ।
तुलसी जिअत बिडंबना परिनामहु गत जान ॥

जड़ चेतन गुन दोष मय बिस्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहि पय परिहरि बारि बिकार ॥

तुलसीदास

दोहा

बिनु सतसंग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग ।
मोह गएँ बिनु रामपद होइ न दृढ़ अनुराग ॥

तुलसी कोसलपाल सो को सरनागत पाल ।
भज्यो बिभीषन बंधु भय भंज्यो दारिद काल ॥

सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु ।
विद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु ॥

तुलसीदास

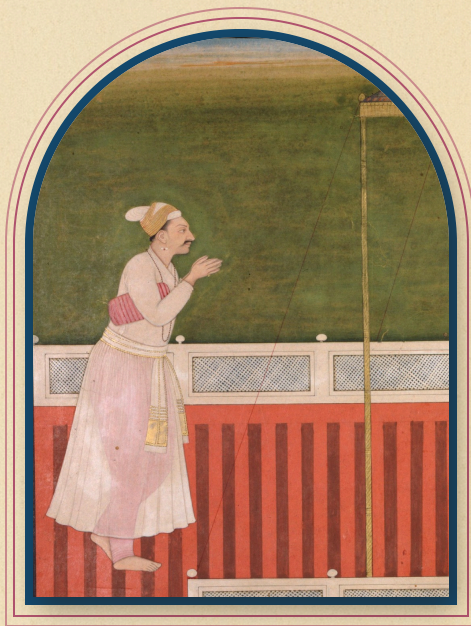
दोहा

तुलसी जसि भवतव्यता, तैसी मिलइ सहाइ ।
आपुनु आवइ ताहि पै, ताहि तहाँ लै जाइ ॥

बरसत हरषत लोग सब करषत लखै न कोइ ।
तुलसी प्रजा सुभाग ते भूप भानु सो होइ ॥

कलह न जानब छोट करि, कलह कठिन परिनाम ।
लगति अगिनि लघु नीच गृह, जरत धनिक धन धाम ॥

बिहारी



चित्र: नैनसुख से सम्बद्ध, लगभग १७६०-६५ • फ़िलाडेल्फ़िया म्यूजियम ऑफ़ आर्ट
(सार्वजनिक डोमेन)

बिहारी रीतिकाल के कवि थे। उनका जन्म ग्वालियर में माना जाता है, बचपन बुंदेलखंड में बीता और बाद में वे मथुरा रहे। समय लगभग 1595 से 1663 (कुछ स्रोतों में 1664) तक है।

उनकी एकमात्र प्रसिद्ध रचना "बिहारी सतसई" है — लगभग सात सौ दोहे, ब्रजभाषा में, कम शब्दों में गहरी बात कहने वाले। वे जयपुर (आमेर) के राजा जयसिंह के आश्रित रहे।

बिहारी

दोहा

मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाँई परैं स्यामु हरित दुति होइ ॥

दृग उरझत, टूटत कुटुम, जुरत चतुर-चित प्रीति ।
परति गाँठि दुरजन-हियैं, दई नई यह रीति ॥

जद्यपि सुन्दर सुघर पुनि सगुनौ दीपक देह ।
तऊ प्रकास करै तितै भरियै जितैं सनेह ॥

बिहारी

दोहा

नीच हियैं हुलसे रहैं गहे गेंद के पोत ।
ज्यों ज्यों माथै मारियत त्यों त्यों ऊँचे होत ॥

वे न इहाँ नागर बढ़ी जिन आदर तो आब ।
फूल्यौ अनफूल्यौ भयौ गँवई गाँव गुलाब ॥

मरत प्यास पिंजरा पर्यौ सुआ समैं कै फेर ।
आदरु दै दै बोलियतु बाइसु बलि की बेर ॥

बिहारी

दोहा

जम करि मुँह तरहरि पर्यौ इहिं धरहरि चित लाउ ।
विषय तृषा परिहरि अजौं नरहरि के गुन गाउ ॥

बंधु भए का दीन के को तार्यौ रघुराइ ।
तूठे तूठे फिरत हौ झूठे बिरदु कहाइ ॥

प्रगट भए द्विजराज कुल सुबस बसै ब्रज आइ ।
मेरे हरौ कलेस सब केसव केसवराइ ॥

बिहारी

दोहा

जप माला छापैं तिलक, सरै न एकौ कामु ।
मन काँचै नाचै बृथा, साँचै राँचै रामु ॥

गिरि तैं ऊँचे रसिक मन बूड़े जहाँ हजारु ।
वहै सदा पसु नरनु कौं प्रेम पयोधि पगारु ॥

लिखन बैठि जाकी सबि, गहि गहि गरब गरूर ।
भए न केते जगत के, चतुर चितेरे कूर ॥

बिहारी

दोहा

अनियारे दीरघ दृगनु कितीं न तरुनि समान ।
वह चितबनि औरै कछु जिहिं बस होत सुजान ॥

कहत नटत रीझत खिझत मिलत खिलत लजियात ।
भरे भौन मैं करत हैं नैननु ही सब बात ॥

मैं हो जान्यौ लोइननु जुरत बाढ़िहै जोति ।
को हो जानत दीठि कौं दीठि किरकिरी होति ॥

बिहारी

दोहा

भूपन भारू सँभारिहै क्यों इहिं तन सुकुमार ।
सूधे पाइ न धर परै सोभा हीं कैं भार ॥

सूर उदित हूँ मुदित मन मुखु सुखमा की ओर ।
चितै रहत चहुँ ओर तें निहचल चखनु चकोर ॥

कहत सबै बेंदी दियै आँकु दसगुनौ होतु ।
तिय लिलार बेंदी दियै अगिनितु बढ़तु उदोतु ॥

बिहारी

दोहा

दीरघ साँस न लेहि दुख सुख साईं नहि भूलि ।
दई दई क्यों करतु है दई दई सु कबूलि ॥

कनकु कनक तैं सौगुनौ मादकता अधिकाइ ।
उहिं खाएँ बौराइ इहिं पाएँ हीं बौराइ ॥

बड़े न हूजै गुननु बिनु बिरद बड़ाई पाइ ।
कहत धतूरे सौं कनकु गहनौ गढ़यौ न जाइ ॥

बिहारी

दोहा

नहिं परागु नहिं मधुर मधु नहिं बिकास इहिं काल ।
अली कली ही सौं बँध्यो आगैं कौन हवाल ॥

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ ।
सौंह करै भौंहनु हँसै दैन कहैं नटि जाइ ॥

अपनें अपनै मत लगे बादि मचावत सोरु ।
ज्यै त्यै सब सेइबौ एकै नंदकिसोरु ॥

बिहारी

दोहा

कोटि जतन कोऊ करौ परै न प्रकृतिहिं बीचु ।
नल बल जलु ऊँचै चढ़ै अंत नीच कौ नीचु ॥

अति अगाधु अति औथरौ नदी कूप सरु बाइ ।
सो ताकौ सागरु जहाँ जाकी प्यास बुझाइ ॥

जगतु जनायौ जिहिं सकलु सो हरि जान्यौ नाहिं ।
ज्यौं आँखिनु सबु देखियै आँखि न देखी जाहिं ॥

बिहारी

दोहा

दुसह दुराज प्रजानु कौं क्यों न बढै दुखु दंदु ।
अधिक अँधेरौ जग करत मिलि मावस रवि चंदु ॥

कहलाने एकत बसत, अहि मयूर मृग बाघ ।
जगतु तपोवन सौ कियो, दीरघ दाघ निदाघ ॥

को कहि सकै बड़ेनु सौं लखैं बड़ी त्यों भूल ।
दीने दर्ई गुलाब की इन डारनु वे फूल ॥

बिहारी

दोहा

तजि तीरथ हरि राधिका तन दुति करि अनुराग ।
जिहिं ब्रज केलि निकुंज मग पग पग होत प्रयाग ॥

या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहिं कोइ ।
ज्यों ज्यों बूड़ै स्याम रँग त्यों त्यों उज्जल होइ ॥

सोहत ओढ़ें पीत पटु स्याम सलौनें गात ।
मनौ नीलमनि सैल पर आतप पर्यौं प्रभात ॥

बिहारी

दोहा

मोर मुकुट की चन्द्रिकनु, यौं राजत नँदनंद ।
मनौ ससि सेखर की अकस, किय सेखर सतचंद ॥

चिरजीवौ जोरी जुरे, क्यों न सनेह गंभीर ।
को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के वीर ॥

लोपे कोपे इन्द्र लौं रोपे प्रलय अकाल ।
गिरिधारी राखै सबै गो गोपी गोपाल ॥

बिहारी

दोहा

तौपर वारैं उरबसी सुन राधिके सुजान ।
तू मोहन कै उर बसी है उरबसी समान ॥

बसै बुराई जासु तन ताही कौ सनमानु ।
भलौ भलौ कहि छोड़ियै खोटैं ग्रह जपु दानु ॥

संगति सुमति न पावहीं परे कुमति कै धंध ।
राखौ मेलि कपूर मैं हींग न होइ सुगंध ॥

बिहारी

दोहा

बहकि बड़ाई आपनी कत राँचति मति भूल ।
बिनु मधुकर कै हियैं गड़ै न गुड़हर फूल ॥

अरे हंस या नगर मैं जैयो आपु बिचारि ।
कागनि सौं जिन प्रीति करि कोकिल दई बिड़ारि ॥

कोऊ कोरिक संग्रहौ, कोऊ लाख हज़ार ।
मो संपति जदुपति सदा, विपत्ति बिदारनहार ॥

बिहारी

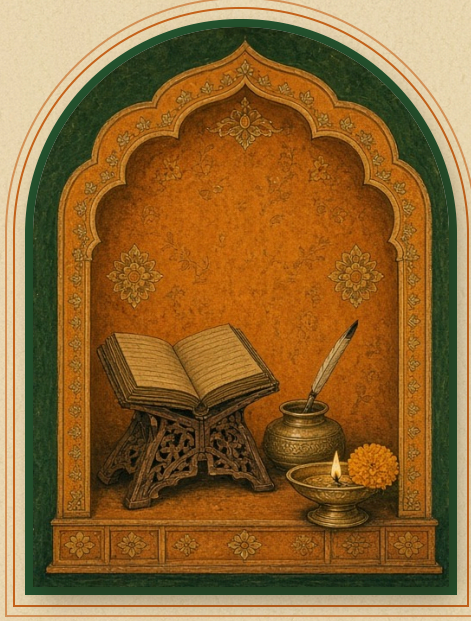
दोहा

जाति मरी बिछुरति घरी जल सफरी की रीति ।
खिन खिन होति खरी खरी अरी जरी यह प्रीति ॥

कागद पर लिखत न बनत कहत सँदेसु लजात ।
कहिहै सबु तेरौ हियौ मेरे हिय की बात ॥

मनमोहन सौं मोहु करि तूँ घनस्याम निहारि ।
कुंजबिहारी सौं बिहरि गिरिधारी उर धारि ॥

वृन्द



चित्र: प्रतीकात्मक चित्रण (कवि का कोई सार्वजनिक चित्र उपलब्ध नहीं)

वृन्द (पूरा नाम वृन्दावनदास) रीतिकाल के कवि थे, जो अपने नीति-दोहों के लिए जाने जाते हैं। उनका जन्म सन् 1643 में माना जाता है; निधन के वर्ष पर स्रोत अलग हैं (लगभग 1723–1735)।

उनके दोहे सरल भाषा में व्यवहार और जीवन की सीख देते हैं; "वृन्द सतसई" उनकी प्रमुख रचना है। जन्म-स्थान पर भी मतभेद है — मारवाड़ (मेड़ता/जोधपुर क्षेत्र) अधिक बताया जाता है।

वृन्द

दोहा

करत करत अभ्यास ते, जड़मति होत सुजान ।
रसरी आवत जात तें, सिल पर परत निसान ॥

जो पावै अति उच्च पद, ताको पतन निदान ।
ज्यों तपि तपि मध्यान्ह लौं, अस्तु होतु है भान ॥

जो जाको गुन जानही, सो तिहि आदर देत ।
कोकिल अंबहि लेत है, काग निबौरी लेत ॥

वृन्द

दोहा

मनभावन के मिलन के, सुख को नहिंन छोरे ।
बोली उठै, नचि नचि उठै, मोर सुनत घन घोर ॥

सरसुति के भंडार की, बड़ी अपूरब बात ।
ज्यों खरचै त्यों त्यों बढ़ै, बिन खरचे घटि जात ॥

निरस बात सोई सरस, जहाँ होय हिय हेत ।
गारी प्यारी लगै, ज्यों ज्यों समधिन देत ॥

वृन्द

दोहा

ऊँचे बैठे ना लहैं, गुन बिन बड़पन कोइ ।
बैठो देवल सिखर पर, बायस गरुड न होइ ॥

उद्यम कबहुँ न छोड़िए, पर आसा के मोद ।
गागरि कैसे फोरिये, उनयो देखि पयोद ॥

कुल सपूत जान्यो परै, लखि सुभ लच्छन गात ।
होनहार बिरवान के, होत चीकने पात ॥

वृन्द

दोहा

मोह महा तम रहत है, जौ लौं ग्यान न होत ।
कहा महा तम रहि सकै, उदित भए उद्योत ॥

कछु कहि नीच न छेड़िए, भले न वाको संग ।
पाथर डारै कीच मै, उछरि बिगारै अंग ॥

अपनी पहुँच बिचारि कै, करतब करिये दौर ।
तेते पाँव पसारिये, जेती लाँबी सौर ॥

वृन्द

दोहा

बुरे लगत सिख के बचन, हिए बिचारो आप ।
करुवे भेषज बिन पिये, मिटै न तन को ताप ॥

फेर न हैहैं कपट सों, जो कीजै ब्यौपार ।
जैसे हाँडी काठ की, चढ़ै न दूजी बार ॥

नैना देत बताय सब, हिय को हेत अहेत ।
जैसे निरमल आरसी, भली बुरी कहि देत ॥

वृन्द

दोहा

अति परिचै ते होत है, अरुचि अनादर भाय ।
मलयागिरि की भीलनी, चंदन देत जराय ॥

सबै सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय ।
पवन जगावत आग कौं, दीपहिं देत बुझाय ॥

अति हठ मत कर हठ बड़े, बात न करिहै कोय ।
ज्यों ज्यों भीजै कामरी, त्यों त्यों भारी होय ॥

वृन्द

दोहा

विद्या धन उद्यम बिना, कहा जु पावै कौन ।
बिना डुलाए ना मिले, ज्यों पंखा कौ पौन ॥

बनती देख बनाइये, परन न दीजै खोट ।
जैसी चलै बयार तब, तैसी दीजै ओट ॥

मधुर वचन ते जात मिट, उत्तम जन अभिमान ।
तनिक सीत जल सों मिटै, जैसे दूध उफान ॥

वृन्द

दोहा

लालच हू ऐसी भली, जासों पूरे आस ।
चाटेहूँ कहूँ ओस के, मिटत काहु की प्यास ॥

मूढ़ तहाँ ही मानिये, जहाँ न पंडित होय ।
दीपक को रवि के उदै, बात न पूछै कोय ॥

होय बुराई तें बुरो, यह कीनों करतार ।
खाड़ खनैगो और को, ताको कूप तयार ॥

वृन्द

दोहा

कन कन जोरै मन जुरै, काढ़ै निबरै सोय ।
बूँद बूँद ज्यों घट भरै, टपकत रीतै तोय ॥

कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर ।
समय पाय तरुवर फरै, केतिक सींचौ नीर ॥

क्यों कीजे ऐसो जतन, जाते काज न होय ।
परबत पर खोदै कुआँ, कैसे निकरै तोय ॥

वृन्द

दोहा

चतुर सभा में कूर नर, सोभा पावत नाहिं ।
जैसे बक सोहत नहीं, हंस मंडली माहिं ॥

हीन अकेलो ही भलो, मिले भले नहिं दोय ।
जैसे पावक पवन मिलि, बिफरै हाथ न होय ॥

फल बिचार कारज करौ, करहु न व्यर्थ अमेल ।
तिल ज्यों बारू पेरिये, नाहीं निकसै तेल ॥

वृन्द

दोहा

ताको अरि का करि सकै, जाकौ जतन उपाय ।
जरै न ताती रेत सों, जाके पनहीं पाय ॥

ताही को करिये जतन, रहिये जिहि आधार ।
को काटै ता डार को, बैठै जाही डार ॥

ऊँचे पद को पाय लघु, होत तुरत ही पात ।
घन तें गिरि पर गिरत जल, गिरिहूँ ते ढरि जात ॥

वृन्द

दोहा

उत्तम विद्या लीजिए, जदपि नीच पै होय ।
पर्यौ अपावन ठौर को, कंचन तजत न कोय ॥

बड़े बड़े को बिपति तैं, निहचै लेत उबारि ।
ज्यों हाथी को कीच सों, हाथी लेत निकारि ॥

ओछे नर के चित्त में, प्रेम न पूर्यो जाय ।
जैसे सागर को सलिल, गागर में न समाय ॥

वृन्द

दोहा

बिन स्वारथ कैसे सहै, कोऊ करुए बैन ।
लात खाय पुचकारिये, होय दुधारू धैन ॥

अपनी अपनी गरज सब, बोलत करत निहोर ।
बिन गरजै बोले नहीं, गिरवर हू को मोर ॥

स्वारथ के सबहिं सगे, बिन स्वारथ कोउ नाहिं ।
सेवै पंछी सरस तरु, निरस भए उड़ि जाहिं ॥

वृन्द

दोहा

दुष्ट न छाड़ै दुष्टता, बड़ी ठौरहूँ पाय ।
जैसे तजै न स्यामता, विष शिव कण्ठ बसाय ॥

दुष्ट रहै जा ठौर पर, ताको करै बिगार ।
आगि जहाँ ही राखिये, जारि करें तिहिं छार ॥

जाकौ बुधि बल होत है, ताहि न रिपु को त्रास ।
घन बूँदें कह करि सके, सिर पर छतना जास ॥

रविदास



चित्र: गुलेर शैली का चित्र, लगभग १७८०, राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली (सार्वजनिक डोमेन)

रविदास (रैदास) बनारस (वाराणसी) के आसपास के संत-कवि थे, जो चर्मकार (जूते बनाने वाले) परिवार से माने जाते हैं। उनका समय निश्चित नहीं है — लगभग 15वीं-16वीं सदी (कुछ स्रोत 14वीं सदी भी कहते हैं)।

वे जाति-भेद के विरोधी थे और निराकार ईश्वर की भक्ति सिखाते थे। उनके लगभग 40-41 पद गुरु ग्रंथ साहिब में हैं। मान्यता है कि वे कबीर के समकालीन थे।

रविदास

दोहा

हरि-सा हीरा छाँड़ि कै, करै आन की आस ।
ते नर जमपुर जाहिंगे, सत भाषै रविदास ॥

जाति-जाति में जाति हैं, जो केतन के पात ।
रैदास मनुष ना जुड़ सके, जब तक जाति न जात ॥

रविदास जन्म के कारनै, होत न कोउ नीच ।
नर कूँ नीच करि डारि है, ओछे करम की कीच ॥

रसखान



चित्र: प्रतीकात्मक चित्रण — बाँसुरी, मोर-पंख और कमल (कवि का चित्र नहीं)

रसखान (मूल नाम सैयद इब्राहिम) कृष्ण के भक्त कवि थे और जन्म से मुसलमान थे। वे दिल्ली छोड़कर ब्रज (वृन्दावन) में रहे; निधन लगभग 1628 में माना जाता है।

उनकी रचनाएँ "प्रेमवाटिका" (दोहे) और "सुजान-रसखान" (कवित्त-सवैये) हैं। जन्म-वर्ष पर मतभेद है (लगभग 1533 या 1548)।

रसखान

दोहा

प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोइ ।
जो जन जानै प्रेम तो, मरै जगत क्यों रोइ ॥

बिन गुन जोबन रूप धन, बिन स्वारथ हित जानि ।
सुद्ध कामना ते रहित, प्रेम सकल रसखानि ॥

अति सूक्ष्म कोमल अतिहि, अति पतरौ अति दूर ।
प्रेम कठिन सब ते सदा, नित इकरस भरपूर ॥

रसखान

दोहा

हरि के सब आधीन पै, हरि प्रेम आधीन ।
याही ते हरि आपु ही, याहि बड़प्पन दीन ॥

प्रेम अयनि श्रीराधिका, प्रेम बरन नँदनंद ।
प्रेमवाटिका के दोऊ, माली मालिन द्वंद्व ॥

वेद मूल सब धर्म यह, कहैं सबै श्रुतिसार ।
परम धर्म है ताहु तें, प्रेम एक अनिवार ॥

समापन

दोहे खत्म हो जाते हैं, पर उनकी सीख नहीं।

आपने जो पढ़ा, उसमें से कोई एक दोहा आज चुन लीजिए और याद कर लीजिए। फिर किसी अपने को सुना दीजिए। इसी तरह ये दोहे पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते आए हैं।

पढ़ने के लिए धन्यवाद।

— आयुष



दोहे जो मन मोहे

पढ़िए, गुनगुनाइए, और
किसी अपने को सुनाइए।

कबीर · रहीम · तुलसीदास ·
बिहारी · वृन्द · रविदास · रसखान

आयुष